भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की वैचारिक पृष्ठभूमि

दीपक कुमार
शोद्यार्थी, इतिहास विभाग
बी.आर.ए.बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

सारांश :–

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन की लड़ाई औपनिवेशिक शासन और भारतीय जनता के हितों के बीच जो आधारभूत अंतर्विरोध विद्यमान था, उसी का परिणाम था। अंतर्विरोध इसलिए पैदा हुआ था कि ब्रिटिश सत्ता ब्रिटिश समाज और ब्रिटिश अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था का शोषण कर रही थी। राष्ट्रीय आंदोलन के प्रत्येक चरण में आंदोलन के नेताओं ने उपनिवेशवाद के प्रति इस वैचारिक दृष्टिकोण को निचले स्तर के कार्यकर्त्ताओं ने भी आत्मसात कर लिया था। गाँधी युग के समय विकसित हुए जन आन्दोलन के दौरान यह दृष्टिकोण देश के हर कोने में फैल गया। इस सोच ने ब्रिटिश शासन की नींव कमजोर करने में बहुत ही बड़ी भूमिका निभाई। उपनिवेशवाद विरोधी विचारधारा के विकास ने ही राष्ट्रीय आन्दोलन का वैचारिक आयाम निर्मित किया।

अंग्रेजो ने अपने हितो को पूरा होने के लिए ही भारत को अधीन बनाया था और इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर वे भारत का शासन चलाते थे। वे अक्सर ब्रिटेन के लाभ के लिए भारतीयों की भलाई को भी ध्यान में नहीं रखते थे । स्वयं ब्रिटिश शासन भारत के अर्थिक पिछड़ेपन का प्रमुख कारण बनता गया और भारत में राष्ट्रीय आंदोलन का आधार यही तथ्य था। यह भारत के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा राजनीतिक विकास में प्रमुख बाधक तत्व बन चुका था। इससे भी बड़ी बात यह है कि अधिक संख्या में भारतीय इस तथ्य को स्वीकार करने लगे थे और उनकी यह संख्या बढ़ती जा रही थीं। जनता में राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना बहुत तेजी से विकसित हुई और भारत में एक संगठित राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में विदेशी शासन से स्वतंत्रता के लिए भारतीयों ने एक लंबा और साहसपूर्ण संघर्ष चलाया और अंत में 15 अगस्त 1947 को भारत मुक्त हो गया।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन :

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के चरित्र निर्धारण में अपनाई गई वैचारिकता ने राष्ट्रीय आंदोलन की रणनीति के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन केवल कुछ अनौपचारिक आंदोलनों की लड़ियों और अंग्रेजो द्वारा उठाए गए संवैधानिक कदमों से उत्पन्न प्रतिक्रियाओं को मिलकर

नहीं बना बल्कि इसकी खुद की निश्चित रणनीति थी जिसे बनाने में सर्वाधिक योगदान गाँधी जी का था। यह रणनीति भारत में विशुद्ध रूप से उपनिवेशी राज्य की जटिल समझ पर आधारित थी।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन उपनिवेशी भारत के केन्द्रीय एवं मुख्य अंतर्विरोधों का उत्पाद था। राष्ट्रीय आंदोलन को दीर्घकालीन गतिशीलता इस तथ्य से प्राप्त हुई कि इसने मुख्य अंतर्विरोध को पहचाना एवं उसे अपना आधार भी बनाया। इसने उपनिवेशवाद एवं भारतीय समाज के प्रमुख विरोधों का विश्लेषण कर भारत के सामने रखा। बीसवीं सदी के आरंभ में साम्राज्यवाद विरोधी विचाारों के प्रभाव के कारण आधुनिक साम्राज्यवाद की जटिल आर्थिक बनावट को और विकसित किया गया। राष्ट्रीय आन्दोलन के निम्नतम संवर्गो और भारतीयों के विभिन्न वर्गो ने भी इस उपनिवेशवाद विरोधी वैश्विक दृष्टिकोण अपना लिया था । इस प्रकार मुख्य अंतर्विरोध ने राष्ट्रीय आन्दोलन को उसके भौतिक तथा संरचनात्मक आधार के साथ–साथ उपनिवेशवाद विरोधी विचारधारा तथा वैचारिक आधार दे दिया।

लोकतंत्र तथा नागरिक अधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता :

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन संसदीय लोकतंत्र और नागरिक अधिकारों के प्रति पूर्णरूप से प्रतिबद्ध था। जब औपनिवेशिक शासक लगातार यह प्रचार–प्रसार कर रहे थे कि भारत की जलवायु उसकी ऐतिहासिक परम्पराओं तथा उसकी धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं के कारण तोकतंत्र यहाँ के लिए उपयुक्त नहीं है तथा भारतीयों के ऊपर निरंकुश सत्तावादी ढंग से ही शासन किया जा सकता है। स्वाधीनता आन्दोलन ने वह मार्ग तैयार किया, जिससे संसदीय लोकतंत्र और नागरिक अधिकारों के प्रति निष्ठा गहरी जड़े जमा सके। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन ने जनवादी विचारों और संस्थाओं को साधारण जनता में लोकप्रिय बनाना और सार्वजनिक चुनावों के आधार पर संसदीय संस्थाओं की स्थापना के लिए संघर्ष किया। 20वीं सदी के प्रारंभ से ही राष्ट्रवादी व्यस्क मताधिकार लागू किये जाने की मांग कर रहे थे। इस आंदोलन ने औपनिवेशिक शासन द्वारा प्रेस स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर होने वाले हमलों पर उतना ही ध्यान दिया जितना की अन्य राजनीतिक और आर्थिक नितियों पर। 1937 ई० में गठित कांग्रेस मंत्रिमण्डलों ने किसानों, मजदूरो और छात्र आंदोलनकर्त्ताओं यहाँ तक कि उग्रवादी समूहों, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी तक को नागरिक अधिकार का लाभ बड़े पैमाने पर उपलब्ध कराया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तो अपने स्थापना काल (1885) से ही तोकतांत्रिक ढंग से चल रही थी। उसके तमाम प्रस्तावों पर खुली बहस होती और फिर मतदान होता। किसी मामले पर किसी वर्ग की राय अलग होती, तो उसे न केवल स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्त करने की छूट मिलती थी, बल्कि उसे इसके लिए प्रोत्साहित भी किया जाता था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कुछ अत्यधिक महत्वपूर्ण निर्णय गरमागरम बहस के बाद और खुले मतदान के आधार पर लिए गए।

नागरिक अधिकारों के प्रति गाँधीजी भी पूर्णतया प्रतिबद्ध थे। जब असहयोग आंदोलन अपने चरम उभार पर था, उन्होंने जनवरी,1922 के 'यंग इंडिया' में लिखा, ''सरकार ने देश के सामने जो मुद्दा पैदा कर दिया है, उसकी तुलना में स्वराज, खिलाफत और पंजाब का सवाल गौण सवाल है। हम अपने लक्ष्य की तरफ एक कदम भी बढ़ सके, इसके लिए स्वतंत्र अभिव्यक्ति और संगठन के अधिकार को हमें हासिल करना ही होगा। हमें इन अधिकारों की रक्षा जान देकर भी करनी चाहिए।

जवाहरलाल नेहरू नागरिक स्वतंत्राओं के शायद सबसे बड़े हिमायती थे। वे उन्हें उतना ही महत्वपूर्ण मानते थे जितना आर्थिक समानता और समाजवाद को कराची कांग्रेस ने 1931 में मौलिक अधिकारों पर जो प्रस्ताव पारित किया था, उसे नेहरू ने ही तैयार किया था। अगस्त 1936 में उन्हीं के प्रयत्नों से इंडियन सिविल लिबर्टीज यूनियन की स्थापना हुई। यह एक गैरदलीय, असांप्रदायिक संगठन था और इसका उद्देश्य नागरिक अधिकारों पर होने वाले हमलों के खिलाफ जनमत बनाना था। इस तरह राष्ट्रवादी आंदोलन ने धीरे–धीरे लोकतंत्र और संस्कृति विकसित करने में सफलता प्राप्त की जिसके आधार थे असहमति के प्रति सम्मान भाव, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, बहुमत के शासन का सिद्धान्त और अल्पसंख्यक मतो के बने रहने और बढ़ने के अधिकार की मान्यता।

धर्मनिपेक्षता को राष्ट्रवादी विचारधारा का बुनियादी तत्व बनाया गया तथा हिन्दू– मुस्लिम एकता पर बहुत जोर दिया गया। जैसा कि हम देख चुके है, राष्ट्रीय आंदोलन सांप्रदायिकता को मिटा नहीं सका या देश के विभाजन को रोक नहीं सका, तो इसलिए नहीं कि वह धर्मनिरपेक्ष विचारधारा से भटक गया था, बल्कि इसलिए कि सांप्रदायिकता से संघर्ष की उसकी रणनीति में कुछ कमजोरियाँ थी और वह संप्रदायिकता की सामाजिक–आर्थिक तथा विचारधारात्मक जड़ो को समझ नही पाया। राष्ट्रीय आन्दोलन ने जाति–जुल्म का भी विरोध किया। स्त्रियों की स्वाधीनता के मामले को भी गंभीरता से लिया गया।

प्रशासकीय और आर्थिक एकीकरण :

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारत का एकीकरण हो चुका था और वह एक राष्ट्र के रूप में उभर चुका था। इसलिए भारतीय जनता में राष्ट्रीय भावनाओं का विकास आसानी से हुआ। अंग्रेजो ने धीरे–धीरे पूरे देश में सरकार की एक समान, आधुनिक प्रणाली लागू कर दी थी और इस तरह इसका प्रशासकीय एकीकरण हो चुका था। ग्रामीण और स्थानीय आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के विनाश तथा अखिल भारतीय पैमाने पर आधुनिक व्यापार तथा उद्योग की स्थापना के कारण, भारत के आर्थिक जीवन निरंतर एक इकाई के रूप में ढ़लता चला गया तथा देश के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगो के आर्थिक हित परस्पर संबद्ध हुए। उदाहरण के लिए भारत के किसी एक भाग में अकाल पड़ता या वस्तुओं की कमी होती

तो दूसरे सभी भागों में भी खाद्य–सामग्री की कीमतों तथा उपलब्धता पर उसका प्रभाव पड़ता था। इसके अलावा रेलवे, तार तथा एकीकृत डाक व्यवस्था के शुभारंभ ने भी देश को एकजुट बना दिया था और जनता, खासकर नेताओं के पारस्परिक संपर्क को बढ़ावा दिया था।

इस सिलसिले में भी विदेशी शासन का अस्तित्व ही एकता का कारण बन गया, हालांकि यह शासन सामाजिक वर्ग, जाति, धर्म या क्षेत्र का भेद किए बिना पूरी भारतीय जनता का दमन करता था। पूरे देश के लोगों ने देखा कि वे एक ही शत्रु अर्थात ब्रिटिश शासन, के हाथों पीड़ित थे। एक तरफ तो वह भारतीय राष्ट्रवाद के उदय का एक प्रमुख कारण बन गया और दूसरी तरफ साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष तथा उस संघर्ष के दौरान उपजी एकजुटता की भावना, ने भारतीय राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

पश्चिमी विचार और शिक्षा :

उन्नीसवीं सदी में आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा और विचारधारा के प्रसार के फलस्वरूप बहुत बड़ी संख्या में भारतीयों ने एक आधुनिक, बुद्धिसंगत, धर्मनिरपेक्ष जनतांत्रिक तथा राष्ट्रवादी राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाया। वे यूरोपीय राष्ट्रों के समसामयिक राष्ट्रवादी आंदोलनों का अध्ययन, उसकी प्रशंसा तथा उनका अनुकरण करने के प्रयत्न भी करने लगे। रूसो, पेन, जॉन स्टुअर्ट मिल तथा दूसरे पाश्चात्य विचारक उनके राजनीतिक मार्गदर्शक बन गए जबकि मैजिनी, गैरीबाल्डी तथा आयरलैंड के राष्ट्रवादी नेता उनके राजनीतिक आदर्श हो गए।

हमें यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि राष्ट्रीय आंदोलन आधुनिक शिक्षा प्रणाली की उपज नहीं था, बल्कि यह ब्रिटेन तथा भारत के हितों के टकराव से उत्पन्न हुआ था। इस प्रणाली ने शिक्षित भारतीयों को पाश्चात्य विचार अपनाकर राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व संभालने तथा उसे एक जनतांत्रिक और आधुनिक शिक्षा देने में समर्थ बनाया। राष्ट्रवादी विचार तो आधुनिक विचारों के सामान्य प्रसार के कारण आए।

आधुनिक शिक्षा ने शिक्षित भारतीयों के दृष्टिकोणों तथा हितों में एक सीमा तक एकजुटता और समानता पैदा की। इस सिलसिले में अंग्रेजी भाषा की एक महत्वपूर्ण भूमिका रहीं। यह आधुनिक विचारों के प्रसार का साधन बन गई । यह देश के विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के शिक्षित भारतीयों के बीच विचारों के आदान–प्रदान तथा संपर्क का भी माध्यम बन गई। लेकिन जल्द ही अंग्रेजी साधारण जनता में आधुनिक ज्ञान के प्रसार में बाधक भी बन गई । यह शिक्षित नागरिक वर्गो को साधारण जनता, खासकर ग्रामीण जनता से अलग रखने का काम भी करने लगी। भारत के राजनीतिक नेताओं ने इस तथ्य को अच्छी तरह

समझा दादाभाई नौरोजी, सैयद अहमद खान, और जस्टिस रानार्ड से लेकर तिलक और गाँधी जी तक सभी ने शिक्षा प्रणाली में भारतीय भाषाओं को एक बड़ी भूमिका दिए जाने की मांग पर आंदोलन किए।

तीव्र परिवहन तथा संचार साधनों का विकास :

वास्तव में प्रशासनिक सुविधाएँ, सैनिक रक्षा के उद्देश्य, आर्थिक व्यापन तथ व्यापारिक शोषण की बातों का ध्यान रखते हुए ही परिवहन के तीव्र साधनों की योजनाएँ बनी। पक्के मार्गो का एक जाल बिछ गया जिससे प्रान्त एक दूसरे से तथा ग्रामीण प्रदेश बड़े–बड़े नगरो से जुड़ गए। देश को एक बॉधने वाला सबसे बड़ा साधन रेलवे थी। रेलवे के बहुत से अन्य लाभों के अतिरिक्त रेलवे ने देश में राष्ट्रीयता की भावना जगाई।

अंतर्देशीय पत्रों के लिए 2 पैसे का एक समान टिकट और समाचार पत्रों तथा पार्सलों पर इससे भी कम दर में भेजने की व्यवस्था ने देश के सामाजिक, शैक्षणिक, बौद्धिक तथा राजनीतिक जीवन में एक परिवर्तन पैदा कर दिया। डाकखानों के द्वारा जो देश के कोने–कोने में काम करते थे, राष्ट्रीय साहित्य स्थान–स्थान पर भेजा जा सकता था। संदेशों के शीघ्रातिशीघ्र भेजने में बिजली के तारों ने क्रांति ला दी। इस प्रकार आधुनिक संचार साधनों ने भारत के भिन्न–भिन्न भागों में रहने वाले लोगों को एक–दूसरे से संबंध बनाए रखने में सहायता दी जिससे राष्ट्रवाद को बढ़ावा मिला।

भारतीय समाचार पत्रों ने जनमत को बनाने तथा राष्ट्रीयता के प्रसार में मुख्य भूमिका निभाई। अनेको अंग्रेजी तथा भारतीय भाषा समाचार पत्रों ने इस क्षेत्र में बहुत कार्य किया तथा अंग्रेजी शासकों द्वारा किए गए अतिरेकों को प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने प्रतिनिधि सरकार, स्वतन्त्रता तथा प्रजातंत्रीय संस्थाओं को जनता में लोकप्रिय बनाया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी यदि हम कहे कि भारतीय समाचार पत्र, भारतीय राष्ट्रवाद का दर्पण बन गए और जनता को शिक्षित करने का माध्यम।

जनता की भूमिका :

संकुचित सामाजिक आधार आरंभिक राष्ट्रीय आंदोलन की बुनियादी कमजोरी थी। अभी जनता में इस आंदोलन की पैठ नहीं हुई थी। वास्तव में जनता में नेताओं की कोई राजनीतिक आस्था नहीं थी। सक्रिय राजनीतिक संघर्ष छेड़ने की समस्याओं का वर्णन करते हुए गोपालकृष्ण गोखले ने कहा कि '' देश में विभाजन तथा उपविभाजन की एक अंतहीन श्रृंखला है, जनता का अधिकांश भाग अज्ञान से भरा हुआ तथा विचार और भावना के पुराने तरीकों से कसकर चिपका हुआ है और यह जनता हर प्रकार के परिवर्तन की विरोधी है और परिवर्तन को समझती नहीं है''। इस प्रकार नरमपंथी नेताओं का विश्वास था कि औपनिवेशिक शासन के खिलाफ जुझारू जन–संघर्ष तभी छेड़ा जा सकता है जब भारतीय समाज के

बहुविद्य तत्वों को एक राष्ट्र के सूत्र में बाँधा जा चुका हो। परंतु वास्तव में यही तो वह संघर्ष था जिसके दौरान भारतीय राष्ट्र का निर्माण हो सकता था। जनता के प्रति इस गलत दृष्टिकोण का नतीजा यह हुआ कि राष्ट्रीय आंदोलन के आरंभिक चरण में जनता की भूमिका निष्क्रिय ही रही। इससे राजनीतिक नरमी का जन्म हुआ। जनता के समर्थन के अभाव में वे जुझारू राजनीतिक उपाय नहीं अपना सकते थे। हम आगे देखेंगे कि बाद के राष्ट्रवादी लोग नरम–पंथियों से ठीक इसी अर्थ में भिन्न थे।

फिर भी आरंभिक राष्ट्रीय आंदोलन के संकुचित सामाजिक आधार से हमें यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि यह उन्हीं सामाजिक वर्गो के संकुचित हितों तक सीमित था जो इसमें शामिल थे। इसके कार्यक्रम और इसकी नीतियाँ भारतीय जनता के सभी वर्गो के हितों से जुड़ी थी और औपनिवेशिक वर्चस्व के विरूद्ध उदीयमान भारतीय राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती थी।

समाजवादी रूझान :

भारतीय जनता की विविधता को राष्ट्रीय आन्दोलन ने पूरी तरह स्वीकार किया। इस बात का पूरा ध्यान रखा गया कि भारत राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है और क्षेत्रीय, जातीय, धार्मिक, नेतृत्व और भाषाई भेदों को ध्यान में रखकर ही भारतीय जनता को राष्ट्र के रूप में एक किया जा सकता है। गरीबों के हितों का समर्थन हमारे देश के राष्ट्रीय आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण तत्व रहा है। 1917 ई० की रूसी क्रंति के प्रभाव, राजनीतिक मंच पर गाँधी जी के प्रार्दुभाव तथा 1920 ई० एवं 1930 ई० के दशक में शक्तिशाली वामपंथी दलों एवं ग्रुपों के विकास से गरीबों के प्रति यह पक्षधरता और मजबूत हुई।'' राष्ट्रीय आंदोलन ने अपने विभिन्न चरणों में जो नितियाँ और सुधार के कार्यक्रम अपनाए, वे उस दौर को देखते हुए क्रांतिकारी थे। भारत के राष्ट्रीय आंदोलन की कुछ प्रमुख माँगे इस प्रकार थी– अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, टैक्स के बोझ में कमी, किसानों को राहत, काश्तकारों के अधिकारों की सुरक्षा, मजदूरों के काम के घंटो में कमी तथा जीने लायक मजदूरी का अधिकार, कम वेतन पाने वाले सरकारी कर्मचारियों की वेतन वृद्धि, मजदूरों और किसानों को संगठन बनाने का अधिकार, ग्रामोद्योग की सुरक्षा, आधुनिक विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा को प्रोत्साहन, शराबखोरी की समाप्ति, स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में सुधार तथा उन्हें रोजगार, शिक्षा एवं पुरूषों के बराबर राजनीतिक अधिकार, अस्पृश्यता हटाने के लिए कानूनी कदम तथा कानून–तंत्र में सुधार।

सरकार का रवैया :

आरंभ से ही ब्रिटिश अधिकारी उभरते हुए राष्ट्रवादी आंदोलन के खिलाफ तथा राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रति शंकालु थे। वायसरॉय डफ़रिन ने ह्यूम को यह सुझाव दिया कि कांग्रेस राजनीतिक नहीं बल्कि

सामाजिक मामलों को देखे और इस तरह उसने राष्ट्रीय आंदोलन को दिशाभ्रष्ट करना चाहा। लेकिन कांग्रेस के नेताओं ने ऐसा परिवर्तन करने से इंकार कर दिया। परन्तु जल्दी ही यह स्पष्ट हो गया कि राष्ट्रीय कांग्रेस अधिकारियों के हाथों का खिलौना नहीं बन सकती और यह धीरे–धीरे भारतीय राष्ट्रवाद का केन्द्र बिंदु बनती जा रही थी।

लॉर्ड कर्जन ने 1900ई० में विदेश सचिव को बतलाया कि, 'कांग्रेस का महल भरभरा रहा है और भारत में रहते हुए मेरी मुख्य महत्त्वाकांक्षा यह है कि मैं शांति के साथ इसे मरने में सहयोग दे सकूं।' भारतीय जनता की बढ़ती एकता उनके शासन के लिए एक बड़ा खतरा है, यह महसूस करके अंग्रेज अधिकारियों ने 'बांटो और राज करो' की नीति को और भी जमकर लागू किया। उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों में भी फूट डालने की कोशिश की। राष्ट्रवाद का विकास रोकने के लिए उन्होंने एक तरफ छोटी–छोटी छूटें देने और दूसरी तरफ निर्मम दमन करने की नीति अपनाई। फिर भी अधिकारियों का यह विरोध राष्ट्रीय आंदोलन का विकास रोकने में असफल रहा।

गाँधीजी की क्रंतिकारिता :

राष्ट्रीय आंदोलन की एक प्रमुख विचारधारात्मक दिशा थी गांधीजी और गांधीवादियों की समग्र सामाजिक दृष्टि। गांधी जी समाज के वर्ग –विश्लेषण तथा वर्ग–संघर्ष की भूमिका से सहमत नहीं थे । वे गरीबों के हितों की रक्षा के लिए भी हिंसा के प्रयोग के विरूद्ध थे। लेकिन उनकी बुनियादी दृष्टि समाज परिवर्तन की थी। वे आर्थिक और राजनीतिक सत्ता के तत्कालीन ढ़ांचे में बुनियादी परिर्वतनों के प्रति प्रतिबद्ध थे। इसके लिए वे 1930 और 1940 ई० के दशकों में लगातार क्रांतिकारी दिशा में बढ़ रहे थे। 1933 ई में वे नेहरू की इस बात से सहमत थे कि, ''निहित स्वार्थ में ठोस तब्दीली लाए बिना जनसाधारण की स्थिति में सुधार नहीं लाया जा सकता।'' उन्होंने पूँजीवाद तथा जमींदारी प्रथा में अनिवार्य भूमिका निहित जनता के शोषण की भर्त्सना की। वे मध्य वर्गो की सामाजिक आर्थिक रूप से भी सख्त आलोचना करने लगे थे।

गांधीजी ने शारीरिक और मानसिक श्रम के मूल्यांकन के भेदभाव को मिटाने पर जोर दिया। वे सामाजिक और आर्थिक समानता चाहते थे और जनता की स्वतः प्रेरित सक्रियता को महत्वपूर्ण मानते थे। जाति कें आधार पर विषमता तथा जाति के नाम पर होने वाले जुल्मों का वे विरोध करते थे। स्त्रियों की सामाजिक मुक्ति को उन्होंने अपना सक्रिय समर्थन दिया। वस्तुतः अपने विचारों और लेखन में वे आम तौर पर शोषित तथा दलित लोगों का ही पक्ष लेते थे । इन सब चीजों ने राष्ट्रीय आंदोलन को क्रांतिकारी बनाने में काफी मदद की।

भारतीय स्वतंत्रता के सैनिक के रूप में उनकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था। वह तो संत राजनीतिज्ञ थे जो राजनैतिक साध्यों के लिए नैतिक साधनों का प्रयोग करते थे। वह पशुबल को आत्मिक बल से जीत लेते थे। उन्होंने 1920–22 के असहयोग आन्दोलन, 1930–34 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन, 1940–41 के निजी सविनय अवज्ञा आंदोलन और 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन द्वारा ब्रिटिश सरकार को यह विश्वास (अथवा दबाव) दिलाने का प्रयत्न किया कि भारत की स्वतंत्रता न्यायपूर्ण है। 24 मई, 1942 ई0 को उन्होने लिखा था ''अंग्रेजो तुम चले जाओ। वह भारत में अंग्रेजी राज्य के बने रहने के लिए किसी भी तर्क को स्वीकार करने को उद्दत नहीं थे। 14 जुलाई, 1942 को कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने एक 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पारित किया, जिसमें उन्होंने मांग की कि, ''भारत में अंग्रेजी राज्य तुरंत समाप्त होना आवश्यक है और ..... यह केवल भारत के ही हित में नहीं अपितु इससे संसार की सुरक्षा होगी और संसार में नाज़ीभावना, उग्रराष्ट्रवाद, सैनिकवाद तथा अन्य प्रकार के साम्राज्यवाद और अन्य देशों का दूसरे देशों पर अधिकार समाप्त होने में सहायता मिलेगी।''

निष्कर्ष :

उपनिवेशवाद–विरोधी विचारधारा और उसके साथ जुड़े हुए नागरिक अधिकारों के हिमायती, लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष, सामाजिक रूप से क्रांतिकारी, आर्थिक रूप से विकासशील, स्वतंत्र और ऐक्यबद्ध राजव्यवस्था तथा समाज के 'विभाजन' एवं गरीबो के प्रति पक्षधर क्रांतिकारी– आर्थिक रूझान के कारण ही राष्ट्रीय आन्दोलन में यह शक्ति आई कि वह राजनीतिक रूप से जागृत तथा सक्रिय जनसाधारण एवं उसकी हिस्सेदारी पर निर्भर हो सका, जनांदोलन का स्वरूप ले सका। यह विचारधारा, यह 'विभाजन' तथा जनसाधारण की यह सक्रिय भूमिका ही भारतीय जनता के स्वतंत्रता संघर्ष की सही विरासत है।

संदर्भ :

1. भारत का स्वतंत्रता संग्राम : बिपिनचंद्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी, क. न. पानिकर, सुचेता महाजन। पृष्ठ संख्या– 494, 497, 499, 501, 504, 505
2. आधुनिक भारत का इतिहास : बी.एल.ग्रोवर, अल्का मेहता, यशपाल । पृष्ठ संख्या– 292, 293, 318
3. विकिपीडिया
4. Gyorgy Kalmar,Gandhism, Budapest 1977
5. B.R.Nanda, Mahatma Gandhi - A Biography.
6. आधुनिक भारत– सुमित सरकार
7. आधुनिक भारत का इतिहास : विपिन चन्द्र : पृ.सं.– 192, 195–197, 211, 212

IJMRA